पूज्य लालचंदभाई का प्रवचन
श्री समयसार, गाथा २२०-२२३, ता. ३०-४-१९८९
सोनागिर, प्रवचन नंबर P२१

समयसार की गाथा २२०, २२१, २२२, २२३, चार गाथा हैं। पेज २६६ है। उसकी टीका। यानि, प्रकरण ऐसा है कि एक द्रव्य (के पास) दूसरे द्रव्य के परिणाम में कोई फेरफ़ार करने की शक्ति, परद्रव्य में नहीं है। परद्रव्य मेरे परिणाम को फेरफ़ार कर देगा, ऐसी शंका नहीं करनी। ऐसी बात है। तो उसके ऊपर एक दृष्टांत देते है, दृष्टांत भी बढ़िया (है)।

जैसे यदि शंख परद्रव्यको भोगे, शंख जीव है। शंख नाम का जीव है, उसका शरीर सफ़ेद होता है, शंख का। **जैसे यदि शंख परद्रव्यको भोगे, परद्रव्य को भोगे-खाये तथापि उसका श्वेतपन परके द्वारा काला नहीं किया जा सकता, क्योंकि पर अर्थात् परद्रव्य किसी द्रव्यको परभावस्वरूप करनेका निमित्त (अर्थात् कारण) नहीं हो सकता।** उपादानकारण तो नहीं हो सकता मगर निमित्तकारण का भी अभाव है। अपनी पर्याय पलटने में परपदार्थ तो कर्ता नहीं है, मगर निमित्तकारण भी नहीं है। पर्याय अपने आप पलटती है, तो परपदार्थ को उस टाइम निमित्त का आरोप आता है। निमित्त से उपादान की पर्याय नहीं पलटती है। उपादान की पर्याय अपने से पलटती है, तब परपदार्थ को निमित्त कहा जाता है। यानि परपदार्थ अपने परिणाम में निमित्तकारण भी नहीं है। (परपदार्थ) उपादानकारण (तो) नहीं है और परपदार्थ निमित्तकारण भी नहीं है। आहाहा!

निमित्त (अर्थात् कारण) नहीं हो सकता। निमित्त का अर्थ, कारण नहीं हो सकता। **इसीप्रकार यदि ज्ञानी परद्रव्यको भोगे तो भी उसका ज्ञान परके द्वारा अज्ञान नहीं किया जा सकता, क्योंकि पर अर्थात् परद्रव्य किसी द्रव्यको परभावस्वरूप करने का निमित्त नहीं हो सकता। इसलिए ज्ञानीको परके अपराधके निमित्तसे बंध नहीं होता।** आहाहा! अपने भाव से बंध होता है। निमित्त से बंध नहीं होता है क्योंकि निमित्त से निरपेक्ष इधर उपादान की पर्याय होती है। वो पर्याय में निमित्तकारण है ही नहीं। पहले निरपेक्ष स्वभाव लो।

जिसे आत्मज्ञान हो गया, आत्मज्ञानी पुरुष होता है, तो वो जिनागम का भी अभ्यास करता है और अन्यमत के शास्त्र आदि का भी अभ्यास करते हैं। समझे? जानने के लिए, खंडन के लिए, अपना ये सत्य है, दूसरा सत्य है, ऐसा कभी किसी के साथ कभी वाद-विवाद भी होवे, तो वो सब धर्म का भी अध्ययन करते हैं। तो बौद्धधर्म का शास्त्र, सांख्यमत का शास्त्र पढ़ें, तो इससे ज्ञान, अज्ञान हो जाता है, (ऐसी) शंका नहीं करना। ये ख्याल रखना कि ज्ञानी होने (के बाद) की बात है। होने के बाद की बात है। पहले जो तू पर (शास्त्र) का अभ्यास करे, तो मर जायेगा।

यानि इधर तो ज्ञान की पर्याय प्रगट होने के बाद, ज्ञानी को परपदार्थ के भोग से अपना ज्ञान च्युत नहीं होता है। ज्ञान चले जाता नहीं है। स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, समझे? पाँच इंद्रिय का विषय, उसके साथ आ जावे, संयोग में और उसका भोग भोगे, पाँचों इंद्रियों का। समझ गए? देखना, सूँघना, स्पर्श

करना वगैरह। तो तेरे परपदार्थ का अपराध से इधर अपराधी नहीं होगा तू। शंका मत करना। शंका नहीं करना। जो अपराध होता है, अपने से अपराध होता है और निरपराध परिणाम है, वो भी अपने से स्वतंत्र होता है। परिणाम की शक्ति स्वतंत्र है। पर से अपराध भी नहीं और पर से निरपराध भी नहीं है। अपने स्वभाव को भूल गया। हें? तो देह मेरा है माना, तो अपराध हो गया। और अपना आत्मा जान लिया कि देह भिन्न, आत्मा भिन्न, तो निरपराध हो गया।

बात ऐसी है (कि) सम्यग्दर्शन की बात कोई अपूर्व-लब्धि है। सम्यग्दर्शन अपूर्व-लब्धि है। समझ गए? सम्यग्दृष्टि स्वच्छंदी नहीं होता है। जब (तक) परमात्मा नहीं होता है, तब तक उसको पाँच इंद्रियों के भोग का भाव आता है, उसको आत्मा से भिन्न जानता है। और जो परपदार्थ को भोगता है, वो मैं नहीं भोगता हूँ, दूसरी चीज़ भोगती है (ऐसा मानता है)। भोग्यभाव दूसरा, भोगनेवाला दूसरा (और) उसे जाननेवाला जुदा।

तो एक बड़ा दृष्टांत मैं देता हूँ, तो ख्याल आवे। बहन ने कहा कि ज़रा स्पष्ट करना। तो यह भोग की प्रेरणा नहीं है, मगर पाठ है (कि) दूसरा पदार्थ भोगने से अपराधी नहीं होता है। अपने स्वभाव को छोड़े तो अपराधी होता है। तो इधर से ये अविरत सम्यग्दृष्टि हो कि श्रावक हो कि मुनिराज सच्चे (हों)। और इधर का पंचमकाल है ना, तो पंचमकाल में सीधा मोक्ष तो है नहीं। डाइरेक्ट नहीं है, इंडाइरेक्ट है। डाइरेक्ट मोक्ष इधर नहीं है। बराबर? अभी तो स्थिति (ये है कि) छठवाँ-सातवाँ गुणस्थान तक ही आता है। श्रेणी का काल नहीं है। यह काल का दोष नहीं है मगर ऐसी योग्यता जीव की है कि इस योग्यता में छठवाँ-सातवाँ गुणस्थान तक आता है। उपशमश्रेणी या क्षपकश्रेणी अभी नहीं है। तो समझो, कि वो ब्रह्मचारी (हैं)। मुनिराज ब्रह्मचारी हैं कि नहीं? भावलिंगी संत। और उनका स्वर्गवास हो गया। समझे? पंचम गुणस्थानवाला अविरती हो, श्रावक, चौथा गुणस्थानवाला अविरत सम्यग्दृष्टि हो, सम्यग्दृष्टि की भूमिका में इधर से स्वर्ग का ही बंध होता है। और नीचे के दो-एक-दो-तीन हैं ना, स्वर्ग? वहाँ जो जाता है, वहाँ तो देवियाँ है। समझ गए? वहाँ तो देवियाँ है। देवी के साथ वो भोग भोगता है। तो निर्जरा होती है, बंध नहीं होता है। इसका अर्थ, ये भोग की भावना नहीं करना किसी भी दिन। ये आत्मा की ताकत इतनी है भेदज्ञानी की कि एकत्वबुद्धि छूट गयी और परपदार्थ भोगवे तो भी उसको बंध (नहीं)। शंका नहीं करनी कि बंध हो जायेगा। आहाहा!

माघनंदी आचार्य को चारित्र छूट गया। छोड़ा नहीं, छूट गया। चारित्र छोड़ा नहीं उन्होंने, छूट गया। योग्यता ऐसी थी। और कुम्हार की लड़की के साथ शादी कर लिया। है कि नहीं प्रथमानुयोग में? और वहाँ जाकर वो पति-पत्नीरूप भोग भोगते थे, तो भी बंध उनको नहीं था (क्योंकि) एकत्वबुद्धि नहीं है उनको। भोग से हित नहीं मानते हैं। भोग से...भोग का भाव भी पाप और भोग का निमित्त भी पाप है। पाप को पाप ही जानते हैं, पुण्य को पुण्य जानते हैं, धर्म को धर्म (जानते हैं)। (ज्ञान) धर्मी को धर्मीरूप जानता है, ऐसा लैबॉरेटरी है। ज्ञान है ना, लैबॉरेटरी है। लैबॉरेटरी समझे ना? कि लैबॉरेटरी के अंदर जो तत्त्व जिसरूप है, (उसका) वो रिपोर्ट देता है। एनालिसिस होता है। ऐसी ज्ञानरूपी जो लैबॉरेटरी है, उसमें क्षणिक-विभाव, क्षणिक-स्वभाव और त्रिकाल-स्वभाव, जुदे-जुदा (रहते हैं)। दर्पण में, ज्ञान-दर्पण में दिखता है। एकताबुद्धि होती नहीं है और इसकी योग्यता है तो ऐसा भाव, अंदर में

योग्यता पड़ी है, तो (ऐसा) भाव आता है। और ध्रुव में योग्यता होने पर (भी) उत्पाद-व्यय नहीं है और उत्पाद होता है, तो भोग होता है और भोग करके निर्जरा हो जाती है।

समयसार के निर्जरा अधिकार की शुरुआत में लिया। समझ गये? ज्ञानी भोगता है, बाद में निर्जरा होती है। है ना पाठ। आहाहा! ये बात ऐसी है कि जीव को ये तत्त्वज्ञान का अभ्यास नहीं (है और) क्रियाकांड में पड़ गया (है)। ये खाना, ये नहीं खाना, ऐसा करना, वैसा करना। आहाहा! छूताछूत, वैष्णव के माफ़िक़। समझे? आहाहा! आत्मा रह गया। आयुष्य पूरा हो गया। आहाहा! ये उसमें परपदार्थ की सावधानी में रखता है, चौबीस घंटा। परपदार्थ में दोष नहीं आवे, (ऐसा) बराबर ध्यान रखना परपदार्थ में हो। आहाहा! बराबर ध्यान रखना। उसका ध्यान परपदार्थ में है। आहाहा!

मुमुक्षुः- अध्यवसान है।

उत्तरः- अध्यवसान है।

मुमुक्षुः- कहाँ से विचार आवे कि मैं पर को जानता नहीं हूँ।

उत्तरः- कहाँ से (विचार आवे)? विचार ही नहीं आवे।

मुमुक्षुः- परद्रव्य से अपने में हित-अहित (होता है, ऐसा) माने, तो ये तो (पर को) जानना तो कहाँ से बंद हो? कर्ता-कर्म संबंध मानता है।

उत्तरः- क्योंकि उससे ही अपना हित मानता है। पर से अपना हित-अहित माना। आहाहा! अपने गुण से अपना हित, अपने दोष से (अपना) अहित और त्रिकाल (स्वभाव तो) हित-अहित से रहित (है)। त्रिकालस्वभाव तो (हित-अहित से रहित है), वो मैं हूँ। वहाँ कहाँ आता है (जीव)? ये तो परपदार्थ का दोष देखते हैं। आहाहा! अलौकिक बात है!

और जब वही शंख, वही शंख लेना, शंख दूसरा नहीं लेना। जो सफ़ेद शंख था, काला पदार्थ खाता था, तो भी सफ़ेद रहता था। काला पदार्थ खाने से सफ़ेद का काला नहीं होता है। काला पदार्थ खाया इसलिए काला हो गया, ऐसा नहीं है। समझे? **और जब वही शंख, परद्रव्यको भोगता हुआ अथवा न भोगता हुआ**, दो बात अलौकिक हैं। भोगता हुआ या न भोगता हुआ, भोगवे या न भोगवे, तो भी **श्वेतभावको छोड़कर स्वयमेव कृष्णरूप परिणमित होता है** ये परिणमन की शक्ति बताते हैं। आहाहा! शंख की परिणमन की योग्यता है, तो धोला (सफ़ेद), सफ़ेदरूप होता है। काला खाने पर काला नहीं होता है। और ये सफ़ेद शंख काला खाना छोड़ दिया, तो भी काला बन जाता है। काला खाना बंद किया, तो भी काला बन जाता है। इसका ये हेतु है कि काला खाने से काला हुआ नहीं है और काला खाना छोड़ दिया और काला हो गया। अपनी पर्याय की योग्यता से सफ़ेद पर्याय का व्यय, काली पर्याय का उत्पाद, ऐसा स्वयं होता है, अपनी योग्यता से। पर्याय की योग्यता है। जीव तो वही का वही (है)। सफ़ेद था तो भी वही जीव (रहा)। काला हो गया, शरीर का कालापन हो, शरीर की कालास (कालापन है तो भी जीव तो वो ही का वो ही (है)। यानि परपदार्थ खाने न खाने से (फर्क नहीं पड़ता)। आहाहा! क्या करें? आहाहा!

परपदार्थ खाने... ये खाने जैसा है और नहीं खाने जैसा है, ऐसा भेद तो रहता है, मगर अभी इधर तो श्रद्धा का दोष न आवे, वो बात है। इसकी छूट नहीं है कि कोई भी पदार्थ खा लो तुम। संध्या!

ऐसा नहीं है। एक पाँच उदंबर फल और दारू आदि, मकार खा ले, ऐसी बात नहीं है। आहाहा! ये बात कोई अलौकिक है! समझे? समझने जैसी बात है, अंदर की। स्वच्छंदी होने की बात नहीं है, स्वतंत्र होने की बात है।

श्वेतभावको छोड़कर स्वयमेव, खाता हो या न खाता हो, स्वयमेव, वो पर्याय पलट जाती है। **स्वयमेव कृष्णरूप परिणमित होता है तब उसका श्वेतभाव स्वयंकृत कृष्णभाव होता है।** देखो! परकृत नहीं, स्वयंकृत। आहाहा! ये श्वेत पर्याय का व्यय और काली पर्याय का उत्पाद, उसका कारण स्वयं पोते (है)। स्वयंकृत है, निमित्तकृत नहीं है।

मुमुक्षुः- पर्याय का कर्ता पर्याय है .... स्वयंकृत है।

उत्तरः- पर्याय का कर्ता पर्याय है! इसलिए तेरहवीं गाथा बढ़िया से बढ़िया है। ये नवतत्त्व है, भूतार्थनय से जान। ये भूतार्थनय से श्वेत या कृष्ण, (इसको) भूतार्थनय से देख। ऐसा हुआ तो ऐसा हुआ, ऐसा नहीं है। आहाहा! ऐसा है तो ऐसा हो गया, ऐसा नहीं है। आहाहा!

तेरहवीं गाथा के अंदर में ऐसा बीज बो दिया कि सारे जब नवतत्त्व का मैं विवेचन करूँगा और कर्ता-कर्म, निमित्त-नैमित्तिक मैं कहूँगा, समझ गए? मगर उस तत्त्व को तू भूतार्थनय से जानना, पहले। बाद में व्यवहारनय से जानो। पहले निरपेक्ष और बाद में सापेक्ष, ये पाठ है। खाता हो या न खाता हो, स्वयं काला हो गया। बोलो! काला पदार्थ खावे तब सफ़ेद रहता था, काला नहीं हुआ (था)। और काला पदार्थ (खाना) छोड़ दिया और सफेद पदार्थ खाने लगा, सफ़ेद, तो भी काला हो गया। इसका अर्थ ये (है) कि परपदार्थ खाने से कोई लाभ-हानि नहीं हुई है। आहाहा!

मुमुक्षुः- दृष्टांत बहुत (अच्छा है)।

मुमुक्षुः- बहुत अच्छा दृष्टांत है!

उत्तरः- हें? ये तो सर्वज्ञ भगवान की कही हुई वाणी है, समयसार में आयी है। आहाहा!

एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ कर्ता-हर्ता नहीं है। दोनों का स्वचतुष्टय भिन्न-भिन्न है। अत्यंताभाव है, अत्यंत अभाव है। दो द्रव्य के बीच में, आहाहा! अत्यंताभाव होने से कर्ता-कर्म संबंध नहीं है और निमित्त-नैमित्तिक सम्बंध भी नहीं है और ज्ञाता-ज्ञेय संबंध भी नहीं है। आहाहा! वहाँ तक जाना है। आहाहा!

श्वेतभाव स्वयंकृत कृष्णभाव होता है (अर्थात् स्वयमेव किये गये कृष्णभावरूप होता है), इसीप्रकार जब वह ज्ञानी, आहाहा! वो ज्ञानी जब भोग भोगता था, तब ज्ञानी रहा और भोग को छोड़ दिया तो अज्ञानी बन जाता है। भोग भोगता था, तहाँ तक ज्ञानी रहा और भोग का त्याग कर दिया, समझे? भोग का त्याग कर दिया, तो स्वयं अज्ञानी बन गया। तो उसको, परपदार्थ को भोगता था, तो ज्ञानी का अज्ञानी नहीं बना और परपदार्थ का भोग छोड़ दिया, (तब अपने आप अज्ञानी बन गया)। समझे? पहले गृहस्थ था, समझो। पहले गृहस्थ था और गृहस्थ अवस्था में, गृहस्थ अवस्था में ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा नहीं लिया था। ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा (नहीं ली थी) और (फिर) भेदज्ञान से ज्ञानी बन गया। समझ में कुछ आया कि नहीं? ऐसा दृष्टांत देता हूँ कि ख्याल में आए।

सम्यग्दृष्टि हो गया। समझे? बाद में ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा लिया, वैराग्य आ गया। समझे? ब्रह्मचर्य

की प्रतिज्ञा लिया, तो स्त्री के भोग के टाइम सम्यग्दृष्टि (हुआ) और ब्रह्मचर्य का पालन करने लगा। समझे? यानि स्त्री का संग नहीं करता है। समझे? और अपने स्वभाव को भूल गया तो मिथ्यादृष्टि बन गया। इसका प्रकरण ये चलता है कि परपदार्थ से अपने परिणाम में कोई फेरफ़ार नहीं होता है। तेरे परिणाम का फेरफ़ार तेरे वश है। बस! हाँ! स्वयंकृत है। लिखा है कि नहीं? आहाहा!

मुमुक्षुः- स्त्री कारण नहीं थी इसमें।

उत्तरः- स्त्री कारण हो तो सम्यग्दर्शन टिके नहीं। सम्यग्दर्शन तो टिकता था और ब्रह्मचर्य पाला, अपने स्वभाव को छोड़ दिया, समझा? (तो) अज्ञानी हो गया। बोलो! आहाहा! ऐसी बात है। ये कच्चा पारा है, कच्चा पारा। संभल-संभलकर, पका-पकाकर खाना, ऐसा ख्याल रखना। ये स्वच्छंदी होने की बात (नहीं है)। और ब्रह्मचर्य का त्याग करना और अब्रह्मी बनना, ऐसा उपदेश नहीं है। वो तो बात है ही नहीं।

मुमुक्षुः- वो तो अन्यमत में भी नहीं है।

उत्तरः- अन्यमत में भी नहीं है। नीचे उतरने की बात इधर है ही नहीं। आहाहा!

मुमुक्षुः- ये तो रहस्य है।

उत्तरः- हाँ! रहस्यमय बात है कि....

मुमुक्षुः- सिद्धक्षेत्र में खुलता है रहस्य।

उत्तरः- आहाहा! सिद्धक्षेत्र है। ऐसा तो क्या दृष्टांत तो बहुत हैं। समझ गए? ऐसे दृष्टांत तो बहुत हैं। ऐसा दृष्टांत दिया छेल्ला (अंतिम) कि ख़याल में आ जाये कि परपदार्थ से बंध होता नहीं है। अपने भाव से बंध होता है और अपने भाव से मोक्ष। परिणाम से बंध और परिणाम से मोक्ष। अपने परिणाम से बंध होता है और अपने परिणाम से मोक्ष होता है। परपदार्थ का अपराध बिल्कुल तेरे में लागू पड़ता नहीं है। परपदार्थ को दोष क्यों देता है? आहाहा!

इसीप्रकार जब वह ज्ञानी, वही ज्ञानी लेना। भोग भोगनेवाला ज्ञानी लेना। ज्ञानी दूसरा नहीं, वो ही ज्ञानी जब भोग भोगता था, तब वही ज्ञानी, ज्ञानी रहता था। **वह ज्ञानी, परद्रव्यको भोगता हुआ अथवा न भोगता हुआ**, स्त्री का त्याग कर दिया, भोगता नहीं है। समझे? ये तो स्त्री का बड़ा दृष्टांत है, बाकी सब पाँच इंद्रिय का विषय घटा लेना। समझे? सब घटा लेना। आहाहा! **ज्ञानको छोड़कर** देखो! आहाहा! **भोगता हुआ अथवा न भोगता हुआ,** परपदार्थ को छोड़ दिया, पाँच इंद्रिय के विषय (को छोड़ दिया)। **ज्ञानको छोड़कर स्वयमेव अज्ञानरूप परिणमित होता है तब उसका ज्ञान स्वयंकृत अज्ञान होता है।**

मुमुक्षुः- स्वयंकृत।

उत्तरः- हाँ! परकृत नहीं है!

मुमुक्षुः- अज्ञान स्वयंकृत है।

उत्तरः- अज्ञान स्वयंकृत और ज्ञान भी स्वयंकृत। हाँ! ज्ञान भी परकृत नहीं और अज्ञान भी परकृत नहीं है। और सूक्ष्म बात तो ऐसी है कि ज्ञान भी स्वकृत नहीं है, ज्ञान भी। ज्ञान अपनी योग्यता से (है), निरपेक्ष देखो। आहाहा! जब उसका लक्ष्य, उसका लक्ष्य ज्ञायक पर है, तो ये जीवकृत है ज्ञान, ऐसा

कहा जाता है। बाक़ी तो है पर्यायकृत ज्ञान। द्रव्यकृत भी नहीं है, तो निमित्तकृत तो कहाँ से आवे? ऐसी बात है! अलौकिक बात है! पर्याय सत्, अहेतुक है। पर्याय, द्रव्य सत्, गुण सत्, पर्याय सत्, निरपेक्ष देखो। पर्याय को (निरपेक्ष देखो)। आहाहा!

ऐसा आया मेरा, तो भाव आ गया, (भाव) बिगड़ गया। ओहोहो! केरी नहीं थी सामने, रस। रस आया, जब रस को देखा ना, तो मेरे को रस को, रस के प्रति लेने की इच्छा हुई, पाप भाव आया। जो रस (को) नहीं देखूँ तो पाप नहीं होता था, ऐसा नहीं है। रस का सद्भाव हो कि रस का अभाव हो, ये पाप-पुण्य स्वयं होता है। वो तो निमित्तमात्र है। स्वतंत्र सत् है। ज्ञान भी सत् और अज्ञान भी सत्। मिथ्यात्व भी सत् और सम्यग्दर्शन भी सत्। सम्यग्दर्शन नहीं होता था, मगर जब हमको गुरु मिले, ज्ञानी।... समझे? तब सम्यग्दर्शन हो गया। तेरे को सम्यग्दर्शन हुआ ही नहीं। गुरु से सम्यग्दर्शन होता है कि आत्मा स्वयंकृत है? हाँ! सम्यग्दर्शन होता है, तब विनयभाव आता है कि आपने सम्यग्दर्शन दिया। हें? ऐसा गुरु (के) ऊपर विनय (भाव) ज़रूर करता है। हाँ! आता है उसको भाव, (ये) विनय का भाव है, मगर ये गुरुकृत सम्यग्दर्शन नहीं है। अरे! सम्यग्दर्शन आत्मकृत नहीं है। आत्मा दाता नहीं है, तो गुरु दाता कहाँ से आ गया? वो तो व्यवहार का वचन है। उस व्यवहार के वचन को निश्चय का मानना, एकत्वबुद्धि हो जाती है। निमित्ताधीन दृष्टि हो गयी। आहाहा! भाई साहब ने ऐसा किया वहाँ..... यानि गहरी बात है। थोड़ी गहराई की बात है। भाई साहब! आहाहा! गहराई की बात है। ऊँचे-ऊँचे जाने की बात है, नीचे पड़ने की बात है ही नहीं। अन्यमत में नहीं है, तो स्वमत में तो कहाँ से हो?

देखो! **स्वयमेव अज्ञानरूप परिणमित होता है तब उसका ज्ञान स्वयंकृत अज्ञान होता है। इसलिए ज्ञानीके यदि (बंध) हो तो वह अपने ही**, एव, अपने ही **अपराधके निमित्तसे (अर्थात् स्वयं ही अज्ञानरूप परिणमित हो तब) बंध होता है।** पर के कारण से बंध होता नहीं है। यानि ज्ञान छूटता है, तो अपने कारण से छूट जाता है। आहाहा! दूसरे के कारण से नहीं छूटता है। आहाहा! पहले सम्यग्दर्शन हुआ, बाद में एक करोड़ रूपये की लॉटरी लग गयी। समझे? सम्यग्दर्शन की भूमिका है तो करोड़ रुपया आया तो सम्यग्दर्शन छूट गया, ऐसा नहीं है। उसके अंदर एकत्वबुद्धि कर लेता है कि अभी मैं (करोड़पति हो गया), तो सम्यग्दर्शन छूट गया है। और दूसरा, दस लाख रूपये की पार्टी हो। (वो) दस लाख रुपया पाप के उदय से चले जाये, सम्यग्दृष्टि, तो सम्यग्दर्शन चला जाता नहीं है। पैसा गया तो ज्ञान गया, ऐसा नहीं है और पैसा आया तो ज्ञान टिकता है, ऐसा (भी) नहीं है। परद्रव्यकृत नहीं है परिणाम। पर्यायकृत है (और) व्यवहार से जीवकृत है। निश्चय से पर्यायकृत है और व्यवहार से जीवकृत कहा जाता है। यानि ऐसा नहीं है, उपचार से कहा जाता है।

मुमुक्षुः- जीव का सम्यग्दर्शन छूट गया। जीव का सम्यग्दर्शन छूट गया तो व्यवहार से कहा जाता है।

उत्तरः- हाँ! (सम्यग्दर्शन) छूट गया, तो छोड़ा, ऐसा कहा जाता है। सचमुच तो छूटने का काल है तो छूटता है, आत्मा छोड़ता नहीं है। वो क्यों छोड़े? सम्यग्दर्शन को क्यों छोड़े आत्मा?

मुमुक्षुः- वो स्वयंकृत है।

उत्तरः- स्वयंकृत है। छूटता है स्वयं और उत्पन्न होता है स्वयं। टिकता भी है स्वयं और वृद्धि

होती है, (वो) भी स्वयं। आत्मा जो जाननहार है, आया-गया, आया-टिका, वृद्धि हुआ, वो तो आत्मा को जानते-जानते परिणाम तो जणित (जानने में आ) जाता है, बस। आत्मा का अधिकार जानने का है, करने का नहीं है। जाननामात्र है, आत्मा का स्वरूप। जानो, और स्वरूप जानते-जानते परिणाम भी जणित (जानने में आ) जाता है। आहाहा! करने का अधिकार आत्मा का नहीं है। अभी, आत्मा का अधिकार नहीं है और तू कहता है पर के दोष से मैं दोषित होता हूँ। आहाहा! दूर, दिल्ली बहुत (दूर है)। ये द्रव्यलिंगी की भूल होती है। हाँ! ऐसी बात है। आहाहा! इसलिए गुरुदेव कहते थे, हमारे दुश्मन (भी) कोई द्रव्यलिंगी (कभी) न हों। हमारा कोई दुश्मन हो, तो (उसको भी) द्रव्यलिंगी न हो। सबको भावलिंग हो जावे और सब परमात्मा हो जावें, आहाहा! ऐसी बात है।

भावार्थः- जैसे श्वेत शंख परके भक्षणसे काला नहीं होता, पर से काला नहीं होता। **किंतु जब वह स्वयं ही, स्वयं ही कालिमारूप परिणमित होता है तब काला हो जाता है।** काला हो जाता है। **इसीप्रकार ज्ञानी परके उपभोगसे अज्ञानी नहीं होता,** इससे भोग का परवाना नहीं दिया। परमिट नहीं है भोगने की। मगर परपदार्थ को भोगने से तेरा ज्ञान नहीं छूटेगा, शंका मत करना। आहाहा! **किन्तु जब स्वयं ही अज्ञानरूप परिणमित होता है तब अज्ञानी होता है और तब बंध करता है।** अभी एक श्लोक है, बढ़िया है श्लोक। १५१ श्लोक। बोलो!

ज्ञानिन् कर्म न जातु कर्तुमुचितं किंचित्तथाप्युच्यते ।
भुंक्षे हंत न जातु मे यदि परं दुर्भक्त एवासि भोः ।
बंधः स्यादुपभोगतो यदि न तत्किं कामचारोऽस्ति ते ।
ज्ञानं सन्वस बंधमेष्यपरथा स्वस्यापराधाद् ध्रुवम् ।।१५१।।

अभी लाल बत्ती धरते (दिखाते) हैं। आचार्य भगवान (ने) ऐसा खुलासा कर दिया ना कि परपदार्थ भोगने से बंध होता नहीं है। तो कोई उल्टा नहीं समझ जावे, इसलिए एक श्लोक बनाया (है) टीकाकार ने।

हे ज्ञानी! हे ज्ञानी! आहाहा! सब उनको तो संसार का मालूम है ना कि उल्टा पकड़ लेगा। मर्म तो समझेगा नहीं। आहाहा! हमारी अपेक्षा समझेगा नहीं कि कितनी मर्यादा में ये कथन है। हें? वो तो समझेगा नहीं, तो मर जायेगा। **हे ज्ञानी! तुझे कभी कोई भी कर्म करना उचित नहीं है।** कोई भी करना, कर्म, उचित नहीं है। भोग का कर्म उचित नहीं है। उचित नहीं है। कोई भी कर्म, शुभ और अशुभ दोनों ही, कोई भी कर्म (उचित नहीं है)।

यदि तू यह कहे कि "परद्रव्य मेरा कभी भी नहीं है" परद्रव्य मेरा कभी भी नहीं है। "**और मैं उसे भोगता हूँ"।** एक तो तू कहते है कि परद्रव्य मेरा नहीं है और उसको मैं भोगता हूँ। आहाहा! उल्टी-सुल्टी बात है।

मुमुक्षुः- जब नहीं है, तो क्या भोगता है?

उत्तरः- नहीं है, तो तू कहाँ से भोगता है? और भोगता है, तो मेरा है, ऐसा करके भोगता है तो मिथ्यादृष्टि बन जायेगा।

मुमुक्षुः- दोनों तरफ़ से बात की।

उत्तर:- दोनों तरफ़ से बात किया, बता दिया। आहाहा! **तो तुझसे कहा जाता है** मैं पूछता हूँ... एक दफ़े तूने कहा कि परद्रव्य का भोग करने से बंध नहीं होता है। तूने सुना और (फिर) कहता है कि परद्रव्य मेरा नहीं है, तो भी मैं परद्रव्य का भोगता हूँ, ऐसा दलील किया अज्ञानी ने। उसके सामने लाल-बत्ती धरते हैं। समझे?

तो तुझसे कहा जाता है कि हे भाई, तू ख़राब प्रकारसे भोगनेवाला है; यानि परपदार्थ है, ऐसा जानता है और मैं उसका भोगनेवाला हूँ, वो तेरी बात ठीक नहीं है, न्याय-संगत नहीं बैठती है। **जो तेरा नहीं है**, जो तेरा नहीं है, खुलासा करते हैं। तू कहता है कि ये पदार्थ मेरा नहीं है और मैं उसको भोगता हूँ, लड्डू मेरा नहीं है और लड्डू को मैं भोगता हूँ, स्त्री मेरी नहीं है, मैं उसको भोगता हूँ, स्पर्श, रस, गंध, वर्ण मेरा नहीं है, परद्रव्य है, मैं, उसको मैं भोगता हूँ, तो तेरी बुद्धी मिथ्या है। आहाहा!

मुमुक्षु:- इधर कहता है मेरी नहीं है, उधर कहता है (मैं उसको) भोगता हूँ।

उत्तर:- **जो तेरा नहीं है उसे तू भोगता है यह महा खेदकी बात है!** आहाहा! जो तेरी वस्तु नहीं है, तू बोलता है और मैं उसको भोगता हूँ, तो वो बात खेद की है। आहाहा! तो सचमुच यह परद्रव्य है, माना ही नहीं है। स्वद्रव्य मानकर भोगता है।

मुमुक्षु:- हाँ! परद्रव्य माने तो-तो भोगता ही नहीं।

उत्तर:- परद्रव्य माने तो भोक्ता की बात रहती ही नहीं है। भोक्ता बनता है, मगर भोक्ता की बुद्धी नहीं रहती है। क्या कहा?

मुमुक्षु:- अर्थात् दूसरा, दूसरे को भोगता है।

उत्तर:- ऐसा ही है। एकताबुद्धी नहीं है।

मुमुक्षु:- भाई! बहुत मार्मिक!

मुमुक्षु:- माल भरा है।

उत्तर:- **जो तेरा नहीं है उसे तू भोगता है यह महा खेदकी बात है! यदि तू कहे कि**, उसकी तरफ़ से दलील करते हैं आचार्य महाराज, **कि 'सिद्धांतमें यह कहा है कि परद्रव्यके उपभोगसे'**, भोग और उपभोग। एक दफ़े भोगना, उसका नाम भोग। उपभोग यानि बारंबार भोगना। रोटी को एक बार खाना भोग, बारंबार रोटी खाना उपभोग। समझे? **'परद्रव्यके उपभोगसे बंध नहीं होता, इसलिए भोगता हूँ'**। आहाहा!

आपने कहा कि परद्रव्य के भोग से बंध नहीं होता है इसलिए मैं परद्रव्य को भोगता हूँ। हाँ! अज्ञानी की दलील है। आपने कहा कि परद्रव्य के भोग से बंध होता नहीं है, वो बात मेरे को बैठ गयी। समझे? तो मैं परद्रव्य को भोगता हूँ क्योंकि बंध नहीं है। परद्रव्य के भोग में बंध (नहीं है)।

मुमुक्षु:- आप ही ने तो कहा था, साहेब। आप ही ने तो कहा था।

उत्तर:- हाँ! आप ही ने कहा था, अभी। अभी बोला अभी फोक (बदल गए)? आपने कहा था कि परद्रव्य के भोग से बंध होता नहीं है। और अभी समयसार शास्त्र बदला नहीं, अधिकार निर्जरा का रखा, स्याही सूखी नहीं (अभी तक) ऊपर की, ऊपर की स्याही सूखी नहीं, गीली है और यहाँ आप कहते हैं (कुछ और)। आपको सब छूट और हमको बंधन? ये तो पक्षपात है। ज्ञानी को (सभी) अज्ञानी

कहते हैं कि आप भोगें तो निर्जरा और हम भोगें तो बंध? कि ज्ञानी भोगता ही नहीं है। भोगता नहीं है, जानता है। आहाहा! एकत्वबुद्धि से भोगता नहीं है। इच्छापूर्वक भोगता नहीं है। आहाहा! अनिच्छकभाव है। आहाहा! अंदर की बात, रमत है भैया। अंदर की रमत है, बाहर की रमत नहीं है।

यदि तू कहे कि 'सिद्धांतमें यह कहा है कि परद्रव्यके उपभोगसे बंध नहीं होता, इसलिए भोगता हूँ'। आपने कहा था ना अभी कि परद्रव्य के भोग से बंध नहीं है, अपने अपराध से बंध होता है।

तो अभी आपने कहा तो मैं तो भोगने, अभी तो चालू कर दिया (मैंने) भोग। कल तक तो थोड़ा मर्यादा में रहा था, (लेकिन) ये पढ़कर आज तो आलू खाने लगा, प्याज़ खाने लगा, माँस खाने लगा, क्योंकि परद्रव्य के भोग से बंध (नहीं होता)। मर जायेगा। आहाहा! नरक, निगोद में चला जायेगा, ऐसी बात नहीं है। आहाहा! **तो क्या तुझे भोगनेकी इच्छा है?** परद्रव्य है ऐसा मानता है, जानता है और उसको मैं भोगता हूँ। तो मैं पूछता हूँ कि इच्छा है कि अनिच्छा है, भोग की? बोल! भोग की इच्छा से भोगता है कि भोग की इच्छा न हो, तो भोगता है?

मुमुक्षुः- इच्छा है, इच्छा है।

उत्तरः- इच्छा है, तो अज्ञानमयी इच्छा हो गयी। इच्छा का दो प्रकार, अज्ञानमयी इच्छा और अस्थिरता की इच्छा। इच्छा का दो प्रकार है। एक इच्छा मिथ्यात्व के साथ में है और एक इच्छा मिथ्यात्व जाने के बाद की इच्छा है (अर्थात्) सम्यग्दर्शन (के साथ)। आहाहा! अज्ञानमयी इच्छा अलग बात है और अस्थिरता की इच्छा अलग बात है। ये difference (भिन्नता) कैसे ख्याल में आवे? एक दफ़े अनुभव कर ले, तो ख्याल में (आवे)। अनुभवी की बात अनुभवी जाने, अज्ञानी जान सकते नहीं है। आहाहा!

तो क्या तुझे भोगनेकी इच्छा है? तू ज्ञानरूप होकर (-शुद्धस्वरूपमें) निवास कर, भोगने की इच्छा छोड़ दे, ज्ञानरूप होकर, ज्ञान में निवास कर। **अन्यथा (अर्थात् यदि भोगनेकी इच्छा करेगा-अज्ञानरूप परिणमित होगा तो) तू निश्चयतः अपने अपराधसे बंधको प्राप्त होगा।** देखो! वहाँ भी अपने अपराध से बंध होगा, परद्रव्य से नहीं। वो .... लाल लाइन लगा दिया बाद में भी। बाद में भी लगा दिया कि अपने अपराध से, अपनी इच्छा से बंध होता है। मोक्ष से बंध होता नहीं है। इच्छा यानि एकत्वबुद्धि। अस्थिरता की इच्छा अलग बात (है)। आहाहा! वो निर्जरा का कारण है। एकत्वबुद्धि, अज्ञानमय इच्छा बंध का कारण है।

भावार्थः- ज्ञानीको कर्म तो करना उचित ही नहीं है। कोई भी कर्म, कोई भी इच्छा, कोई भी विकल्प, कोई भी राग उत्पन्न करना योग्य नहीं है। **यदि परद्रव्य जानकर भी उसे भोगे तो यह योग्य नहीं है।** आहाहा! वो जिसको परद्रव्य जानता है, उसको भोगता ही नहीं है। क्यों भोगे? आहाहा! वो तो आनंद का भोक्ता रहता है, परद्रव्य को भोगता नहीं है। **परद्रव्यके भोक्ताको तो जगतमें चोर कहा जाता है,** देखो! आहाहा! परद्रव्य मेरा है और मैं उसको भोगता हूँ, वह चोर है। **अन्यायी कहा जाता है। और जो उपभोगसे बंध नहीं कहा सो तो, ज्ञानी इच्छाके बिना ही,** आहाहा! भोगने की इच्छा के बिना (ही) भोगने में आ जाता है। अज्ञानमय इच्छा नहीं। आहाहा! ये इच्छा बलात्कार से आती है।

बलात्कार से आती है ये इच्छा। इच्छा करने का भाव नहीं है, मगर योग्यता है, तो इच्छा उत्पन्न हो जाती है। इच्छा की इच्छा नहीं है। इच्छा है, मगर इच्छा की इच्छा नहीं है। ये इच्छा आई तो ठीक है, ऐसा होता नहीं है।

भोग की इच्छा का नाम, वो पाप जानता है ज्ञानी। आहाहा! मगर क्या है कि वो जो पाप की इच्छा होती है, उसको टालने (के लिए) तो निर्विकल्पध्यान में जाकर टालना चाहिए। समझ में आया? निर्विकल्पध्यान में जाने से इच्छा बंद हो जाती है, उत्पन्न नहीं होती है। मगर ऐसा निर्विकल्पध्यान आता नहीं है और बार-बार वो इच्छा से वो विह्वल (आकुलित) हो जाता है। इच्छा से विह्वल (आकुलित) हो जाता है। ..... तो दो-चार दिन निरंतर ऐसा विचार आया कि लाडू खाऊँ, लाडू खाऊँ, चूरमा का लाडू। समझे? चूरमा का लाडू बनता है ना आपके वहाँ। अच्छा! दाल-बाटी खाऊँ, दाल-बाटी खाऊँ, ऐसा समझो। दो दिन, तीन दिन, चार दिन हुआ। समझे? तो इच्छा टलती नहीं है और उपयोग अंदर में जाता नहीं है। तो बेटी को बुलाया घर के अंदर। बेटा! तेरी मम्मी को बोल कि आज दाल-बाटी खाना है। दाल-बाटी खाया, इच्छा समाप्त हो गई। या तो आत्मा का अनुभव से इच्छा टलती है और नहींतर उसके (इच्छा के विषय के) संग से इच्छा टल जाती है, तथा प्रकार की इच्छा। ऐसी बात है, अंदर की बात है सब।

एक दफ़े गुरुदेव ने कहा कि ज्ञानी की बात तो ज्ञानी ही जानता है। अज्ञानी जानता नहीं है। कभी कोई दफ़े इच्छा ऐसी हो गई, ज्ञानी को। उसके गुणस्थान के योग्य (ही) होती है, अयोग्य होती (नहीं है)। अयोग्य नहीं आता है भाव। योग्य होती है, गुणस्थान के योग्य। चौथे (में) चौथे (के योग्य), पाँचवें (में) पाँचवे (के योग्य)। गुरुदेव ने कहा कि इच्छा होवे, तो वो पदार्थ को भोगवे, स्पर्श, रस, गंध, वर्ण कोई भी। समझे? तो भोग किया (तो) छूट जाती है इच्छा। तो एक भाई बैठे थे। समझे? तो साहब! इच्छा का जो व्यय होना है, तो भोग से व्यय करना, वो तो लाइन बराबर नहीं है। आत्मा में निर्विकल्प हो जाये, तो इच्छा, तथा प्रकार की इच्छा क्षय हो जाये। तो कहे (कि) वो ज्ञानी (की बात है)। अज्ञानी को खबर ही नहीं पड़ता है। समझे आप? ये आपका काम नहीं है, तुम्हारा काम नहीं है। ज्ञानी की बात ज्ञानी जाने। आहाहा! कोई आलौकिक रहस्य है अंदर का, अंदर का रहस्य है। आहाहा! सम्भाल-सम्भालकर ये हज़म करने की बात है। नहीं तो ख़राब परिणाम आएगा। स्वच्छंद नहीं करना (कि) भोग से निर्जरा होती है, ऐसा नहीं है। सम्यग्दर्शन की महिमा बताना है। भेदज्ञान की महिमा बताना है।

ज्ञानी इच्छाके बिना ही परकी ज़बरदस्तीसे उदयमें आए हुएको भोगता है। ज़बरदस्ती, बलात्कार, मैंने कहा ना....ज़बरदस्ती इच्छा आती है। इच्छा को रोक सकता नहीं है। ज़बरदस्ती परिणाम (का) उत्पाद होता है, उसकी योग्यता से। आत्मा का अधिकार नहीं है (कि) उसको रोके। आहाहा!

वहाँ उसे बंध नहीं कहा। यदि यह स्वयं इच्छासे भोगे, इच्छा बिना भोगे। इच्छा सहित भोगे, **तब तो स्वयं अपराधी हुआ और तब उसे बंध क्यों न हो?** यानि बंध होता है। इच्छापूर्वक काम और इच्छा रहित कार्य....इच्छा तो, एक तो अज्ञानमय इच्छा होती है, एकत्वबुद्धि की और एक अस्थिरता की इच्छा होती है।

मुमुक्षुः- ये अस्थिरता की इच्छा, अस्थिरता की इच्छा (है)? ये अस्थिरता की इच्छा (है)?

उत्तरः- हें? अस्थिरता की इच्छा है।

मुमुक्षुः- ज़बरदस्ती।

उत्तरः- चारित्र का दोष।

मुमुक्षुः- जैसे चक्रवर्ती है, वो छहों खंड का भोग कर रहा है कि नहीं कर रहा है? लेकिन बिना इच्छा के कर रहा है। अस्थिरता ...

उत्तरः- लड़ाई करता (है) बिना इच्छा की। इच्छा नहीं है और लड़ाई होती है। लड़ाई करता नहीं है। लड़ाई होती है, उसको जानता है। सचमुच तो उसको जानते हुए आत्मा को ही जानता है।

मुमुक्षुः- इसलिए तो ज्ञानी है।

उत्तरः- ज़रा संभाल करके....ये गाथा है, (संभलकर) समझना। उल्टा-सुल्टा नहीं समझना। आहाहा! हो गया टाइम।